सात

बाइबल की व्याख्या

Biblical Interpretation

पौलुस ने तीमुथियुस को लिखा :

अपनी और *अपने* उपदेश की चौकसी रख; इन बातों पर स्थिर रह, क्योंकि यदि ऐसा करता रहेगा, तो तू अपने, और अपने सुनने वालों के लिये भी उद्धार का कारण होगा (1 तीमु. 4:16, पर बल दिया गया है)।

सेवक को भी इस शिक्षा को मन में रखते हुए, सर्वप्रथम *स्वयं* इस पर ध्यान देते हुए निश्चित कर लेना चाहिए कि वह धर्मपरायणता के नमूने को रख रहा है।

दूसरा उसे *अपनी* शिक्षा पर ध्यान देना चाहिए, क्योंकि उसका अनन्त उद्धार और उनका अनन्त उद्धार जो उसकी सुनते हैं इस पर निर्भर करता है कि वह क्या सिखाता है, जैसा पौलुस ने उपरोक्त उद्धरण में लिखा है।[33] यदि एक सेवक झूठे सिद्धान्त को स्वीकार करता है या लोगों को सत्य बताने से बचता है, तो परिणाम उसके और दूसरों के लिए विनाशकारी हो सकता है।

शिष्य-निर्माण करने वाले सेवक के लिए झूठे सिद्धान्त सिखाने का कोई बहाना नहीं है, क्योंकि परमेश्वर ने सत्य में उसका मार्गदर्शन करने के लिए उसे अपना पवित्र आत्मा और वचन दिया है। इसके विपरीत, गलत उद्देश्यों वाले सेवक दूसरों की शिक्षाओं की नकल करते हैं, वे स्वयं वचन का अध्ययन नहीं करते, और इसी कारण दूसरों के सिद्धान्तों में पाई जाने वाली गलतियों को दोहराते हैं। अपने हृदय को इस सबसे शुद्ध बनाए रखने के लिये सेवक को अपने उद्देश्य को निश्चित कर लेना चाहिए कि वह (1) परमेश्वर को प्रसन्न करने वाला हो और (2) वह लोगों की यीशु के सम्मुख

33.निस्संदेह, पौलुस को बिनाशर्त अनन्त सुरक्षा पर विश्वास नहीं था, अन्यथा उसने तीमुथियुस, एक बचाए गए व्यक्ति, को यह न कहा होता कि अपने उद्धार को आश्वस्त करने के लिए उसे कुछ करने की ज़रूरत है।

खड़े होने में सहायता करे, बजाय इसके कि वह स्वयं व्यक्तिगत रूप से धनी, सामर्थी या प्रसिद्ध बने। इसके अतिरिक्त, उसे ईमानदारी से परमेश्वर के वचन का अध्ययन करना चाहिए, जिससे वह इसके बारे में पूरी व संतुलित समझ पा सके। पौलुस ने तीमुथियुस को भी लिखा,

> अपने आपको परमेश्वर का ग्रहणयोग्य और ऐसा काम करनेवाला ठहराने का प्रयत्न कर, जो लज्जित होने न पाए, और जो सत्य के वचन को ठीक रीति से काम में लाता हो (2 तीमु. 2:15)।

परमेश्वर के वचन को पढ़ना; अध्ययन करना और उस पर मनन करना एक ऐसा अनुशासन है जिस पर एक सेवक को नियमित रूप से अभ्यास करना चाहिए। उसके द्वारा परमेश्वर के वचन का निष्ठापूर्वक अध्ययन किये जाने पर पवित्र आत्मा समझने में उसकी सहायता भी करेगा, यह सुनिश्चित करते हुए कि वह ''सत्य के वचन को ठीक रीति से काम में लाएगा।'' आज कलीसिया में पाई जानेवाली सबसे बड़ी समस्या यह है कि सेवक परमेश्वर के वचन का गलत अर्थ निकालते हैं और परिणामस्वरूप अपनी शिक्षा के द्वारा वे लोगों का गलत नेतृत्व करते हैं। यह गंभीर हो सकता है। याकूब ने चुनौती दी :

> हे मेरे भाइयो, तुम में से बहुत उपदेशकन न बनें, क्योंकि जानते हो, कि हम उपदेशक और भी दोषी ठहरेंगे (याकूब 3:1)।

इसी कारण यह शिष्य निर्माण करने वाले सेवकों के लिए यह जानना अनिवार्य है कि परमेश्वर के वचन की सही सही व्याख्या कैसे करें, किसी भी दिये गए संदर्भ के अर्थ को सही तरह से समझने और संप्रेषित करने के लक्ष्य को जानने के लिए।

परमेश्वर के वचन का सही तरह से अर्थ लगाना उसी तरह से किया जाता है जिस तरह से किसी और के शब्दों का भी अर्थ निकाला जाता है। यदि हम किसी भी लेखक या वक्ता के निर्दिष्ट अर्थ को समझना चाहते हैं तो हमें अर्थ लगाने के कुछ नियमों को लागू करना चाहिए। वे नियम जो सहज बुद्धि पर आधारित होते हैं। इस अध्याय में, हम संपूर्ण बाइबल व्याख्या के अति महत्वपूर्ण नियमों पर विचार करेंगे, वे हैं (1) *बुद्धिमत्ता से पढ़ना* (2) *प्रासंगिक रूप में पढ़ना,* और (3) *ईमानदारी से पढ़ना।*

नियम # 1 बुद्धिमता से पढ़ना। जो कुछ आपने पढ़ा है सकी व्याख्या करना जब तक कि प्रतीकात्मक रूप से इसे समझ न लिया जाए।

Rule #1: Read intelligently. Interpret what you read literally unless it is obviously intended to be understood as figurative or symbolic.

अन्य सभी साहित्यों के समान, पवित्रशास्त्र भाषा के रूपों से भरपूर है जैसे *अलंकार, अतिशयोक्ति और मानव-विज्ञान।*

एक *अलंकार* दो चीज़ों के बीच पाई जाने वाली एकरूपता के बीच का अन्तर है। पवित्रशास्त्र में बहुत से अलंकार हैं। जिनमें से एक अन्तिम भोज के समय यीशु के शब्दों में पाया जाता है :

> जब वे खा रहे थे, तो यीशु ने रोटी ली, और आशीष मांगकर तोड़ी, और चेलों को देकर कहा, लो, खाओ; यह मेरी देह है। फिर उसने कटोरा लेकर, धन्यवाद किया, और उन्हें देकर कहा, तुम सब इसमें से पीओ। क्योंकि यह वाचा का मेरा वह लहू है, जो बहुतों के लिये पापों की क्षमा के निमित्त बहाया जाता है'' (मत्ती 26:26-28)।

यीशु ने जो रोटी अपने शिष्यों को दी क्या उससे उसका अभिप्राय *अक्षरश:* यह था कि वह उसकी देह थी और जिस पेय को उन्होंने पीया क्या वह *अक्षरश:* उसका लहू था? सहज ज्ञान हमसे कहता है *नहीं।* पवित्रशास्त्र स्पष्टतया बताता है कि यीशु ने उन्हें रोटी और दाखरस को दिया और यह अक्षरश: देह और लहू में परिवर्तित होने के बारे में नहीं बताता है। अन्तिम भोज में शामिल होने वाले पतरस और यूहन्ना ने अपनी पत्रियों में इस तरह की किसी ऐसी चीज़ का वर्णन नहीं किया है कि शिष्य नरभक्षी के रूप में अपना कुछ समय बिताते थे!

कुछ तर्क देते हैं, ''लेकिन यीशु ने कहा कि रोटी और दाखरस देह और लहू था, इसलिए मुझे उस पर विश्वास है जो यीशु ने कहा!''

यीशु ने एक बार स्वयं को द्वार भी कहा था (देखें यहून्ना 10:9)। क्या वह कब्ज़ों और चौखट वाला सच में एक द्वार बन गया था? यीशु ने एक बार स्वयं को दाखलता और हमें डालियां कहा (देखें यहू. 15:5)। क्या यीशु सच में एक अंगूर की दाखलता बन गया था? क्या हम सच में दाखलता की डालियां बन गए हैं? यीशु ने एक बार स्वयं को जगत की ज्योति और वह रोटी कहा जो आकाश से नीचे उतरी (देखें यूह. 9:5; 6:41)। क्या यीशु सूर्य का प्रकाश और रोटी का टुकड़ा है?

स्पष्ट है कि ये सभी अभिव्यक्तियां *अलंकार* कही जाने वाली भाषा के रूप हैं, दो चीज़ों के बीच की जानेवाली तुलना जो मूल रूप से असमान हैं लेकिन उनमें कुछ समानताएं भी हैं। कुछ तरह से, यीशु एक द्वार और अंगूर की दाखलता के समान था। अन्तिम भोज के समय में यीशु के कथन अलंकारिक थे। दाखरस उसके लहू के *समान* था (कुछ तरह से)। रोटी उसकी देह के *समान* थी (कुछ तरह से)।

मसीह के दृष्टांत
Christ's Parables

मसीह के दृष्टांत *उपमाएं* हैं, जो कि अलंकार के समान ही हैं, लेकिन उपमाओं में अक्सर *समान, जैसा, इसलिए* जैसे शब्द जोड़े जाते हैं। वे दो चीज़ों के बीच पाई

जानेवाली समानताओं की तुलना करने के द्वारा आत्मिक शिक्षा देते हैं जो असमान हैं। जब हम उनका अर्थ लगाते हैं तो स्मरण करने योग्य यह एक महत्वपूर्ण बिन्दु है; अन्यथा हम प्रत्येक दृष्टांत में छोटे से छोटे विवरण के महत्व को जानने की गलती कर सकते हैं। अलंकार और उपमाएं सदैव एक ऐसे स्थान पर पहुंचते हैं जहां समानताओं का अन्त और असमानताओं का आरम्भ होता है। उदाहरण के लिये, यदि मैं अपनी पत्नी से कहूं, ''तुम्हारी आंखें झील के समान हैं,'' तो मेरे कहने का अर्थ यह होगा कि उसकी आंखें नीली, गहरी और आमंत्रित करने वाली हैं। मेरा अर्थ यह नहीं होगा कि उसमें मछलियां तैरती हैं, पक्षी उस पर बैठते हैं और सर्दी के समय में उसकी ऊपरी सतह पर बर्फ जम जाती है।

आइये यीशु के तीन दृष्टांतों की सभी उपमाओं पर विचार करें, पहला महाजाल का दृष्टांत है :

> फिर स्वर्ग का राज्य उस बड़े जाल के समान है, जो समुद्र में डाला गया, और हर प्रकार की मछलियों को समेट लाया। और जब भर गया, तो उसको किनारे पर खींच लाए, और बैठकर अच्छी अच्छी तो बरतनों में इकट्ठा किया और निकम्मी निकम्मी फेंक दीं। जगत के अन्त में ऐसा ही होगा : स्वर्गदूत आकर दुष्टों को धर्मियों से अलग करेंगे, और उन्हें आग के कुंड में डालेंगे। वहां रोना और दांत पीसना होगा (मत्ती 13:47-50)।

क्या स्वर्ग का राज्य और बड़ा जाल *मूल रूप* में एक ही हैं? बिलकुल नहीं! उनमें *बहुत अधिक* भिन्नता है, लेकिन उनमें कुछ *समानताएं* भी हैं। जिस तरह से मछलियों का न्याय कर उन्हें दो श्रेणियों में बांटा गया, जाल से निकालने पर उपयोगी या अनुपयोगी के रूप में, उसी तरह से परमेश्वर के राज्य में होगा। एक दिन साथ साथ रहने वाले दुष्टों और धर्मियों को अलग अलग किया जाएगा। लेकिन समानताओं का अन्त क्या यहीं हो जाता है। *मछलियां* तैरती हैं; *लोग* चलते हैं। *मछुवारे* मछलियों को अलग करते हैं। *स्वर्गदूत* धर्मियों से दुष्टों को अलग करेंगे। *मछलियों* का न्याय उनके पकने के पश्चात् उनके स्वाद के आधार पर किया जाता है। *लोगों* का न्याय परमेश्वर के प्रति उनकी आज्ञाकारिता और अनाज्ञाकारिता के द्वारा किया जाता है। *अच्छी मछलियों* को बरतनों में डाला जाता है। और *बुरी मछलियों* को फेंक दिया जाता है। *धर्मी लोग* परमेश्वर के राज्य के वारिस होते हैं और दुष्ट *लोगों* को नरक में डाल दिया जाता है।

यह दृष्टांत इस बात का एक सिद्ध उदाहरण है कि एक अलंकार और उपमा में अपूर्ण तुलना है क्योंकि तुलना की जाने वाली चीज़ें मूल रूप से असमान होती हैं। हम वक्ता के अभिप्राय से दूर जाना नहीं चाहते, यह स्वीकार करते हुए कि असमानताएं वास्तव में समानताएं हैं। उदाहरण के लिए, हम सभी जानते हैं कि *अच्छी मछलियों*

का अन्त आग में पकाने के बाद हो जाता है और *बुरी मछलियों* को अगले दिन के लिए पानी में तैरने को डाल दिया जाता है। यीशु ने इसका वर्णन नहीं किया! यह निश्चय ही उसके उद्देश्य के विरोध में होता।

यह विशिष्ट दृष्टांत ''महाजाल के प्रचार'' की नीति को नहीं सिखाता (चाहे कोई कुछ भी कहे) जहां हम हर किसी को चाहे वह अच्छा हो या बुरा कलीसिया में लाने का प्रयास करते हैं, चाहे वे आना चाहते हों या नहीं! यह दृष्टांत यह नहीं सिखाता कि समुद्र तट गवाही देने का सबसे अच्छा स्थान है। यह दृष्टांत यह प्रमाणित नहीं करता कि कलीसिया का उठाया जाना सताव अवधि के अन्त पर होना है। यह दृष्टांत यह नहीं सिखाता कि हमारा उद्धार परमेश्वर को चयन पर आधारित है क्योंकि दृष्टांत की चुनी गई मछलियों के पास अपने चयन के कारण कुछ करने को नहीं था। यीशु के दृष्टांतों में अनुचित बातों को न डालें!

तैयार बने रहना

Remaining Ready

यीशु का एक दूसरा परिचित दृष्टांत दस कुंवारियों का दृष्टांत है :

> तब स्वर्ग का राज्य उन दस कुंवारियों के समान होगा (समान है) जो अपनी मशालें लेकर दूल्हे से भेंट करने को निकलीं। उनमें पांच मूर्ख और पांच समझदार थीं। मूर्खों ने अपनी मशालें तो लीं, परन्तु अपने साथ तेल नहीं लिया। परन्तु समझदारों ने अपनी मशालों के साथ अपनी कुप्पियों में तेल भी भर लिया। जब दूल्हे के आने में देर हुई, तो वे सब ऊंघने लगीं; और सो गईं। आधी रात को धूम मची, कि देखो, दूल्हा आ रहा है, उससे भेंट करने के लिये चलो। तब वे सब कुंवारियां उठकर अपनी मशालें ठीक करने लगीं। और मूर्खों ने समझदारों से कहा, ''अपने तेल में से कुछ हमें भी दो, क्योंकि हमारी मशालें बुझी जाती है।'' परन्तु समझदारों ने उत्तर दिया, कि ''कदाचित् हमारे और तुम्हारे लिये पूरा न हो; भला तो यह है, कि तुम बेचने वालों के पास जाकर मोल ले लो।'' वे मोल लेने को जा रही थीं, तो दूल्हा आ पहुंचा, और जो तैयार थीं वे उसके साथ ब्याह के घर में चली गईं। और द्वार बन्द किया गया। इसके बाद वे दूसरी कुंवारियां भी आकर कहने लगीं, ''हे स्वामी, हे स्वामी, हमारे लिये द्वार खोल दो।'' उसने उत्तर दिया कि ''मैं तुमसे सच कहता हूं, मैं तुम्हें नहीं जानता।'' इसलिये जागते रहो क्योंकि तुम न उस दिन को जानते हो, न उस घड़ी को (मत्ती 25:1-13)।

इस दृष्टांत की प्राथमिक शिक्षा क्या है? यह अन्तिम वाक्य में मिलती है: *प्रभु की वापसी के लिए तैयार रहो, क्योंकि उसके आने में देरी तुम्हारी अपेक्षा से अधिक देरी हो सकती है।*

जैसा मैंने पिछले अध्याय में भी कहा, यीशु ने यह दृष्टांत अपने कुछ घनिष्ठ शिष्यों को बताया (देखें मत्ती 24:3; मर. 13:3), जो निस्संदेह उस समय में उसके पीछे चल रहे थे। अत: इस दृष्टांत में अन्तर्निहित सच्चाई यह है कि पतरस, याकूब, यूहन्ना, और अन्द्रियास के लिए उसके वापस आने तक तैयार न रहने की संभावना थी। इसी कारण यीशु उन्हें चेतावनी दे रहा था। अत:, यह दृष्टांत इस बात की संभावना को सिखाता है कि आज जो मसीह की वापसी के लिए तैयार हैं, हो सकता है कि वे उस समय तैयार न हों जब वह वास्तव में वापस आए। सभी दसों कुंवारियां *आरम्भ* में तो तैयार थीं, लेकिन बाद में पांच *तैयार नहीं थीं।* दूल्हा क्या जल्दी आ गया था, दसों विवाह भोज में जा सकती थीं।

पांच मूर्ख और *पांच* बुद्धिमान कुंवारियों के होने का महत्व क्या है? क्या यह प्रमाणित करता है कि केवल आधे तथा कथित विश्वासी ही यीशु की वापसी तक तैयार होंगे? नहीं।

तेल का क्या महत्व है? क्या यह पवित्र आत्मा को प्रस्तुत करता है? नहीं। क्या हम पर यह प्रगट करता है कि पवित्र आत्मा का बपतिस्मा पाए हुए ही स्वर्ग में प्रवेश कर पाएंगे? नहीं।

क्या आधी रात के समय दूल्हे का आना यह प्रगट करता है कि यीशु मध्यरात्रि के समय आएगा? नहीं।

दूल्हे ने बुद्धिमान कुंवारियों को द्वार पर अपनी मूर्ख मित्रों की प्रतीक्षा करने को क्यों नहीं कहा? यदि दूल्हे ने ऐसा कहा होता तो यह दृष्टांत के प्रमुख विषय को ही बिगाड़ देता क्योंकि मूर्ख भी प्रवेश कर जातीं।

संभवत: यह कहा जा सकता है कि जिस तरह मूर्ख कुंवारियां अधिक समय तक रोशनी न होने के कारण सोने चली गईं, उसी तरह से मूर्ख विश्वासी आत्मिक अंधकार में चलना आरम्भ कर देते हैं और आत्मिक रूप से सो जाते हैं, जो कि अन्तत: उन्हें उनके दण्ड की ओर ले जाता है। *संभवत:* दृष्टांत के विवाह भोज में और मेमने के भावी विवाह भोज में समानता पाई जा सकती है, लेकिन ऐसा तब ही संभव है जब कोई इस दृष्टांत के अर्थ या विविध विवरण की ओर बल न दे।

फल लाना
Bearing Fruit

मैंने यीशु द्वारा दिये गए दृष्टांतों में से यदि किसी दृष्टांत की प्रचारक द्वारा गलत

व्याख्या को कभी सुना है तो वह गेहूं और जंगली बीज का दृष्टांत है। सबसे पहले आइये इस दृष्टांत को पढ़ें :

> उसने उन्हें एक और दृष्टांत दिया कि ''स्वर्ग का राज्य उस मुनष्य के समान है जिसने अपने खेत में अच्छा बीज बोया। पर जब लोग सो रहे थे तो उसका बैरी आकर गेहूं के बीच जंगली बीज़ बोकर चला गया। जब अंकुर निकले और बालें लगीं, तो जंगली दाने भी दिखाई दिए। इस गृहस्थ के दासों ने आकर उससे कहा, 'हे स्वामी, क्या तूने अपने खेत में अच्छा बीज न बोया था? फिर जंगली दाने के पौधे उस में कहां से आए?' उसने उनसे कहा, 'यह किसी बैरी का काम है।' दासों ने उससे कहा, 'क्या तेरी इच्छा है, कि हम जाकर उनको बटोर लें?' उस ने कहा, 'ऐसा नहीं, न हो कि जंगली दाने के पौधे बटोरते हुए उनके साथ गेहूं भी उखाड़ लो। कटनी तक दोनों को एक साथ बढ़ने दो और कटनी के समय मैं काटने वालों से कहूंगा; पहिले जंगली दाने के पौधे बटोरकर जलाने के लिए उनके गट्ठे बान्ध लो, और गेहूं को मेरे खत्ते में इकट्ठा करो' (मत्ती 13:24-30)।

अब इसकी व्याख्या या अर्थ एक प्रचारक द्वारा दिया गया है :

> यह सच है कि गेहूं और जंगली दानों के फूटने पर वे एक समान दिखाई देते हैं। कोई भी नहीं बता सकता कि वे गेहूं हैं या जंगली दाने। ऐसा ही संसार और कलीसिया में है। कोई नहीं बता सकता कि कौन सच्चे मसीही हैं और कौन अविश्वासी हैं। उन्हें उनके जीवन जीने के ढंग से जाना नहीं जा सकता, क्योंकि बहुत से मसीही अविश्वासियों के समान परमेश्वर की आज्ञा का पालन नहीं कर रहे हैं। केवल परमेश्वर ही उनके मनों को जानता है, और वह अन्त में उनकी छटाई करेगा।

निश्चय ही यह गेहूं और जंगली दाने के दृष्टांत का प्रमुख विषय नहीं है। वास्तव में, यह सिखाता है कि विश्वासी अविश्वासियों की तुलना में *अधिक* विशिष्ट हैं। इस पर ध्यान दें कि दासों ने यह जाना कि गेहूं बोने के समय जंगली दाने भी बोए गए थे (पद 26)। जंगली दानों में फल नहीं आता, और इसी कारण उन्हें आसानी से जंगली दानों के रूप में जाना जा सकता है। मेरे विचार से यह महत्वपूर्ण है कि यीशु ने दुष्टों को प्रस्तुत करने के लिए *फलहीन* जंगली दानों का चयन किया जिन्हें अंत में इकट्ठा कर नरक में डाला जाएगा।

इस दृष्टांत के प्राथमिक विषय सरल हैं : *सच में उद्धार पाया हुआ फल लाता है; उद्धार न पाए हुए फल नहीं लाते। उद्धार पाए हुओं के साथ दुष्टों के रहते हुए*

वह उनका न्याय अभी नहीं कर रहा है, तौभी एक दिन वह उन्हें धर्मियों से अलग कर नरक में डालेगा।

> यीशु ने इस विशिष्ट दृष्टांत की व्याख्या को भी दिया है, अत: किसी को भी उसकी व्याख्या से आगे अधिक अर्थ लगाने की ज़रूरत नहीं है : अच्छे बीज का बोने वाला मनुष्य का पुत्र है। खेत संसार है अच्छा बीज राज्य के संतान और जंगली बीज दुष्ट के सन्तान हैं। जिस बैरी ने उनको बोया वह शैतान है; कटनी जग का अन्त है: और काटने वाले स्वर्गदूत हैं। सो जैसे जंगली दाने बटोरे जाते और जलाएं जाते हैं वैसा ही जगत के अन्त में होगा। मनुष्य का पुत्र अपने स्वर्गदूतों को भेजेगा, और वे उसके राज्य में से सब ठोकर के कारणों को और कुकर्म करने वालों को इकट्ठा करेंगे! और उन्हें आग के कुंड में डालेंगे, वहां रोना और दांत पीसना होगा। उस समय धर्मी अपने पिता के राज्य में सूर्य की नाईं चमकेंगे; जिस के कान हों वह सुन ले (मत्ती 13:37-43)।

अतिशयोक्ति
Hyperbole

बाइबल में पाया जाने वाला भाषा का एक दूसरा सामान्य रूप *अतिशयोक्ति* है। एक अतिशयोक्ति को बल देने के लिए जान बूझकर बढ़ा चढ़ाकर कर कहा जाता है। जब एक मां अपने बच्चे से कहती है, ''मैं ने तुम्हें हज़ार बार कहा है कि घर आकर खाना खाओ,'' यह एक अतिशयोक्ति है। बाइबल में यीशु द्वारा कही गई अतिशयोक्ति अपने दहिने हाथ को काटकर फेंकने के बारे में होगी:

> और यदि तेरा दहिना हाथ तुझे ठोकर खिलाए, तो उसको काटकर अपने पास से फेंक दे, क्योंकि तेरे लिये यही भला है, कि तेरे अंगों में से एक नाश हो जाए और तेरा सारा शरीर नरक में न डाला जाए (मत्ती 5:30)।

यदि यीशु का हममें से प्रत्येक से कहने का अक्षरश: यह अर्थ होता कि हममें से जो कोई भी अपने दहिने हाथ से पाप करता है तो उसे अपने उस हाथ को काटकर फेंक देना चाहिए, तब इस दशा में हममें से प्रत्येक अपने दहिने हाथ से अलग होता! इससे अधिक यीशु हमें यह सिखा रहा था कि पाप हमें नरक में भेज सकता है। और यह कि पाप से बचने का तरीका हमें ठोकर खिलाने वाली चीज़ों और आकर्षणों को दूर करना है।

मानव-विज्ञान

Anthropomorphism

पवित्रशास्त्र में पाया जाने वाला भाषा का तीसरा रूप *मानव-विज्ञान* है। मानव-स्वरूप एक अलंकारिक अभिव्यक्ति है जहां मानवीय गुणों को परमेश्वर को समझने हेतु हमारी सहायता करने के लिए जोड़ा जाता है। उदाहरण के लिए हम उत्पत्ति 11:5 में पढ़ते हैं :

> जब लोग नगर और गुम्मट बनाने लगे, तब इन्हें देखने के लिए यहोवा उतर आया (उत्प. 11:5)।

यह एक मानव-विज्ञान का दृष्टांत है क्योंकि यह बहुत अजीब प्रतीत होता है कि सर्वशक्तिमान परमेश्वर को यह जानने के लिए कि लोग क्या बना रहे थे स्वर्ग से बाबुल तक की यात्रा करनी पड़ी।

बाइबल के अधिकांश विद्वान बाइबल द्वारा व्यक्त किये जाने वाले परमेश्वर के किसी भी देह के भाग को जैसे हाथ, पांव, आँख और बालों को मानव-विज्ञान मानती है। उनका कहना है कि सर्वशक्तिमान का कोई भी भाग मानव के समान नहीं है।

कई कारणों से मैं इस विचार से सहमत नहीं हूं। सर्वप्रथम पवित्रशास्त्र सरल रूप में हमें सिखाता है कि हमें *परमेश्वर* के स्वरूप और समानता में बनाया गया है।

> हम मनुष्य को *अपने स्वरूप के अनुसार अपनी समानता* में बनाएं (उत्प. 1:26, पर बल दिया गया है)।

कुछ कहेंगे कि हमें परमेश्वर के स्वरूप और समानता में इस भाव में बनाया गया है कि हममें चेतना, नैतिक उत्तरदायित्व, तर्क करने की योग्यता आदि पाए जाते हैं। तौभी, आइये उत्पत्ति 1:26 के समान ही एक और पद को पढ़ते हैं, जो कि उसके कुछ ही पृष्ठों के बाद आता है :

> जब आदम एक सौ तीस वर्ष का हुआ, तब उसके द्वारा *उसकी समानता में उस ही के स्वरूप के अनुसार* एक पुत्र उत्पन्न हुआ, उसका नाम शेत रखा। (उत्प. 5:3, पर बल दिया गया है)।

इसका निश्चय ही यह अर्थ है कि शेत शारीरिक बनावट में अपने पिता के समान दिखता था। यदि उत्पत्ति 5:3 का भी यही अर्थ निकलता है तो निश्चय ही उत्पत्ति 1:26 भी इसी के समान की ही अभिव्यक्ति है। सहज ज्ञान और संपूर्ण व्याख्या इसे ऐसा ही मानती है।

इसके अतिरिक्त, जिन बाइबल लेखकों ने परमेश्वर को देखा था हमें उनके द्वारा परमेश्वर का कुछ चित्रण भी मिलता है। उदाहरण के लिए मूसा ने तिहत्तर अन्य इस्राएलियों के साथ परमेश्वर को देखा था:

> तब मूसा, हारून, नादाब, अबीहू और इस्राएलियों के सत्तर पुरनिए ऊपर गए, और *इस्राएल के परमेश्वर का दर्शन किया;* और उसके *चरणों* के तले नीलमणि का चबूतरा सा कुछ था, जो आकाश के तुल्य ही स्वच्छ था। और उसने इस्राएलियों के प्रधानों पर *हाथ* न बढ़ाया, तब *उन्होंने परमेश्वर का दर्शन किया,* और खाया पिया (निर्ग. 24:9-11, पर बल दिया गया है)।

यदि आपने मूसा से पूछा होता कि क्या परमेश्वर के हाथ और पांव थे, तो हमसे क्या कहा जाता?[34]

दानिय्येल भविष्यद्वक्ता को भी पिता परमेश्वर *और* पुत्र परमेश्वर का दर्शन मिला था :

> मैंने देखते देखते अन्त में क्या देखा, कि सिंहासन रखे गए, और कोई अति प्राचीन विराजमान हुआ; उसका वस्त्र हिम सा उजला, और *सिर* के *बाल* निर्मल ऊन खरीखे थे; उसका सिंहासन अग्निमय और उसके पहिये धधकती हुई आग के से देख पड़ते थे। उस प्राचीन के सम्मुख से आग की धारा निकलकर बह रही थी; फिर हज़ारों हज़ार लोग उसकी सेवा-टहल कर रहे थे, और लाखों लाख लोग उसके सामने हाज़िर थे; फिर न्यायी बैठ गए, और पुस्तकें खोली गई...मैने रात में स्वप्न देखा, और देखो, मनुष्य के सन्तान (परमेश्वर पुत्र) सा कोई आकाश के बादलों समेत आ रहा था, और वह उस अति प्राचीन के पास पहुंचा, और उसको वे उसके समीप लाए। तब उसको ऐसी प्रभुता, महिमा और राज्य दिया गया, कि देश-देश और जाति-जाति के लोग और भिन्न-भिन्न भाषा बोलनेवाले सब उसके अधीन हों; उसकी प्रभुता सदा तक अटल, और उसका राज्य अविनाशी ठहरा (दानि. 7:9-10, 13-14)।

यदि आपने दानिय्येल से पूछा होता कि क्या परमेश्वर के सफेद बाल थे और क्या उसका ऐसा कोई आकार था जिससे कि वह बैठ सके तो दानिय्येल क्या कहता?

इस सबके कारण मैं यह मानता हूं कि परमेश्वर पिता का एक महिमामयी रूप है जो कि कुछ कुछ हम मानवों जैसा है, यद्यपि वह लहू और मांस से नहीं बना है, बल्कि एक आत्मा है (देखें यूह. 4:24)।

आप यह पहचान कैसे कर सकते हैं कि पवित्रशास्त्र के कौन से भाग की अक्षरश: व्याख्या की गई है और किसकी प्रतीकात्मक रूप में व्याख्या की जानी चाहिए? यह सही तर्क देने वाले प्रत्येक व्यक्ति के लिए सरल होना चाहिए। जो कुछ लिखा गया

34. मूसा ने भी एक बार अपने साथ चलते हुए परमेश्वर की पीठ को देखा था। परमेश्वर के अपने हाथ को इस तरह से रखा था कि मूसा उसके चेहरे को देख नहीं सका था; देखें निर्गमन 33:18-23

है उसकी प्रतीकात्मक रूप में तुलना करने की अपेक्षा कोई भी दूसरा बौद्धिक विकल्प न होने पर प्रत्येक चीज़ की अक्षरश: व्याख्या करें। उदाहरण के लिए पुराने नियम के भविष्यद्वक्ताओं और प्रकाशितवाक्य की पुस्तक, प्रतीक से भरपूर हैं, उनमें से कुछ को स्पष्ट किया गया है, कुछ को नहीं। लेकिन प्रतीकों को जानना कठिन नहीं है।

***नियम #2 प्रासंगिक* रूप में पढ़ें। प्रत्येक परिच्छेद की व्याख्या आस-पास के परिच्छेदों और समस्त बाइबल के प्रकाश में होनी चाहिए। जहां तक संभव हो, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक संदर्भ पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए।**

Rule #2: Read contextually. Every passage must be interpreted in light of the surrounding passages and the entire Bible. The historical and cultural context should also be considered whenever possible.

ध्यान दिये बिना पवित्रशास्त्र को पढ़ना उसकी गलत व्याख्या करने का प्राथमिक कारण है।

पवित्रशास्त्र को उसके संदर्भ से अलग करते हुए जो आप कहना चाहते हैं उसे बाइबल द्वारा कहना सरल है। उदाहरण के लिए, क्या आप जानते हैं कि परमेश्वर का कोई अस्तित्व नहीं है? भजन संहिता 14 में हम पढ़ते हैं, ''कोई परमेश्वर है ही नहीं (भजन. 14:1)। तौभी, यदि हम उन शब्दों की सही-सही व्याख्या करना चाहते हैं, तो हमें उन्हें उनके संदर्भ में होकर पढ़ना चाहिए : *मूर्ख ने अपने मन में कहा है*, कोई परमेश्वर है ही नहीं'' (भजन. 14:1, पर बल दिया गया है)। अब इस पद का बिल्कुल भिन्न अर्थ निकलता है!

दूसरा उदाहरण : मैंने एक प्रचारक को मसीहियों को ''आग में बपतिस्मा'' दिये जाने की आवश्यकता पर संदेश देते सुना था। उसने मत्ती 3:11 से यूहन्ना बपतिस्मा देने वाले के शब्दों को पढ़ने के द्वारा संदेश का आरम्भ किया ''मैं तो पानी से तुम्हें मन फिराव का बपतिस्मा देता हूं, परन्तु जो मेरे बाद आनेवाला है, वह मुझसे शक्तिशाली है; मैं उसकी जूती उठाने के योग्य नहीं, वह तुम्हें पवित्र आत्मा और आग से बपतिस्मा देगा।''

इस पद के आधार पर उसने एक संदेश बनाया। मुझे उसका कथन याद है, ''केवल पवित्र-आत्मा में बपतिस्मा लेना ही तुम्हारे लिये पर्याप्त नहीं है। यीशु तुम्हें यूहन्ना बपतिस्मा देने वाले की घोषणा के अनुसार, आग से बपतिस्मा देना चाहता है!'' उसने स्पष्ट किया कि 'आग से बपतिस्मा' पाने के बाद हम प्रभु के लिए कार्य करने को उत्साह से भरे रहेंगे। अन्तत:, उसने 'आग से बपतिस्मा' लेने वालों को वेदी की बुलाहट दी।

दुर्भाग्यवश, उस विशिष्ट प्रचारक ने पवित्रशास्त्र के पद को उसके संदर्भ से बाहर लाकर गलती की थी।

यूहन्ना बपतिस्मा देनेवाले का यह कहने से क्या अभिप्राय था कि यीशु आग से

बपतिस्मा देगा? उत्तर पाने के लिए हम सभी को उसके ऊपर के दो पदों को पढ़ने की ज़रूरत है, एक एक पद करके। आइये दो पूर्ववर्ती पदों को पढ़ते हुए आरम्भ करें। वहां यूहन्ना ने कहा :

> और अपने अपने मन में यह न सोचो, कि ''हमारा पिता इब्राहीम है; क्योंकि मैं तुम से कहता हूं, कि परमेश्वर इन पत्थरों से इब्राहीम के लिये सन्तान उत्पन्न कर सकता है। और अब कुल्हाड़ा पेड़ों की जड़ पर रखा हुआ है, इसलिये जो जो पेड़ अच्छा फल नहीं लाता वह काटा और *आग में झोंका जाता है* (मत्ती 3:9-10, पर बल दिया गया है।)

हम सबसे पहले यह सीखते हैं कि उस दिन यूहन्ना के श्रोताओं में यहूदी भी थे जिनका सोचना था कि उनका उद्धार उनकी वंशावली पर आधारित है। अत:, यूहन्ना का संदेश प्रचारीय था।

हम यह भी सीखते हैं कि यूहन्ना यह भी चेतावनी दे रहा था कि उद्धार न पाए लोग *आग में डाले जाने* के खतरे में हैं। यह परिणाम निकालना उचित होगा कि यूहन्ना पद 10 में जिस ''आग'' के बारे में बोला वह पद 11 के समान थी।

पद 12 को पढ़ने पर यह सच्चाई और भी स्पष्ट हो जाती है:

> उसका सूप उसके हाथ में है, और वह अपना खलिहान अच्छी रीति से साफ करेगा, और अपने गेहूं को तो खत्ते में इकट्ठा करेगा, *परन्तु भूसी को उस आग में जलाएगा जो बुझने की नहीं''* (मत्ती 3:12, पर बल दिया गया है)।

दोनों ही पदों 10 और 12 में यूहन्ना नरक की आग के बारे में बोल रहा था। पद 12 में वह अलंकारिक रूप में कहता है कि यीशु लोगों को दो समूह में विभाजित करेगा। गेहूं, जिसे वह अपने खत्ते में इकट्ठा करेगा, और भूसी, जिसे वह न बुझने वाली आग में जलाएगा।

आस-पास के पदों की रोशनी में यूहन्ना का पद 11 में यह अभिप्राय था कि यीशु लोगों के विश्वासी होने पर *या तो* उन्हें पवित्र आत्मा से बपतिस्मा देगा अथवा अविश्वासी होने पर आग से। अत: इस तरह से किसी को भी मसीहियों को यह प्रचार नहीं करना चाहिए कि उन्हें आग से बपतिस्मा लेने की ज़रूरत है।

इन पदों के आगे के संदर्भ पर बढ़ते हुए हमें शेष नये नियम की ओर भी देख लेना चाहिए। क्या हमें प्रेरितों के काम की पुस्तक में ऐसा कोई उदाहरण मिल सकता है जहां मसीहियों से ''आग से बपतिस्मा'' लेने को कहा गया है? नहीं। इससे जुड़ी चीज़ का वर्णन लूका द्वारा पिन्तेकुस्त के दिन का चित्रण करते हुए किया गया है जब शिष्यों को पवित्र आत्मा से बपतिस्मा दिया गया था और आग की जीभें कुछ

समय के लिये ही उनके सिरों पर दिखाई दी थीं। इसके अतिरिक्त, क्या हमें पत्रियों में मसीहियों का 'आग में बपतिस्मा' होने को लेकर कोई निर्देश या उपदेश मिल सकता है? नहीं, इसी कारण यह परिणाम निकालना बिलकुल सुरक्षित है कि किसी भी मसीही को आग से बपतिस्मा लेने का प्रयास नहीं करना चाहिए।

पवित्रशास्त्र से लिया गया एक झूठा सुसमाचार
A False Gospel Derived From Scripture

कई बार सुसमाचार को उन प्रचारकों तथा शिक्षकों द्वारा स्वयं गलत तरह से प्रस्तुत किया जाता है जो संदर्भ पर विचार करने में असफल होने के कारण पवित्रशास्त्र की गलत व्याख्या करते हैं। परमेश्वर के अनुग्रह को लेकर झूठी शिक्षा इसी कारण अधिक संख्या में है।

उदाहरण के लिए, उद्धार के बारे में पौलुस का कथन यह है कि यह अनुग्रह का उत्पादन है न कि कार्यों का जो इफिसियों 2:8 में पाया जाता है, इसका झूठे सुसमाचार को बढ़ाने में गलत प्रयोग किया गया है, इस सबका कारण यह है कि संदर्भ की उपेक्षा की गई है। पौलुस ने लिखा :

> क्योंकि विश्वास के द्वारा अनुग्रह ही से तुम्हारा उद्धार हुआ है, और यह तुम्हारी ओर से नहीं वरन परमेश्वर का दान है। और न कर्मों के कारण, ऐसा न हो कि कोई घमण्ड करे (इफि. 2:8-9)।

अधिकांश लोग पौलुस द्वारा कथित उद्धार के इस कथन पर विशिष्ट रूप से केन्द्रित होते हैं कि उद्धार अनुग्रह का एक दान है न कि कार्यों का परिणाम है। अत: वे पवित्रशास्त्र की सैकड़ों गवाहियों के प्रतिकूल इस बात को लेते हैं कि उद्धार और पवित्रता के बीच कोई संयोजन नहीं है। कुछ इससे भी आगे जाते हुए यह कहते हैं कि इसी कारण उद्धार पाने के लिए पश्चात्ताप करना ज़रूरी नहीं है। संदर्भ की उपेक्षा किये जाने पर पवित्रशास्त्र की गलत व्याख्या किये जाने का यह एक सर्वोच्च उदाहरण है।

सर्वप्रथम, आइये इस पर विचार करें कि वास्तविक परिच्छेद इसकी *अनन्तता* के बारे में क्या कहता है। पौलुस यह *नहीं* कहता कि हमें *अनुग्रह के द्वारा बचाया गया* है, बल्कि यह कि हमें *विश्वास द्वारा अनुग्रह से बचाया गया* है। विश्वास अनुग्रह के समान ही उद्धार के लिए प्रत्येक स्थान पर ज़रूरी है। पवित्रशास्त्र बताता है कि कर्म बिना विश्वास बेकार, मृत व बचाने में सक्षम नहीं है (देखें याकू. 2:14-26)। अत: पौलुस यह नहीं सिखा रहा है कि उद्धार में पवित्रता का होना अनिवार्य है। वह कह रहा है कि हमारे अपने प्रयास हमें नहीं बचाते हैं; हमारे उद्धार का आधार परमेश्वर का अनुग्रह है। परमेश्वर के अनुग्रह के बिना हम बच नहीं सकते हैं, लेकिन केवल विश्वास द्वारा परमेश्वर के अनुग्रह को प्रतिक्रिया देने पर हमारे जीवनों में वास्तव में उद्धार घटित होता है। उद्धार का परिणाम सदैव आज्ञाकारिता होता है जो कि उचित

विश्वास का फल है। अगले पद को छोड़ आगे जाए बिना यह सिद्ध हो जाता है। पौलुस कहता है:

> क्योंकि हम उसके बनाए हुए हैं; और मसीह यीशु में उन भले कामों के लिए सृजे गए जिन्हें परमेश्वर ने पहले से हमारे करने के लिए तैयार किया (इफि. 2:10)।

हमें पवित्र आत्मा के द्वारा नया बनाया गया है, अर्थात् अब हम मसीह में नई सृष्टि हैं, अत: अब हम आज्ञाकारिता के भले कार्यों में चल सकते हैं। अत: पौलुस का उद्धार के विषय में समीकरण इस तरह से है :

अनुग्रह + विश्वास = उद्धार + आज्ञाकारिता

अर्थात् अनुग्रह और विश्वास बराबर हैं और उद्धार और आज्ञाकारिता बराबर हैं। जब परमेश्वर के अनुग्रह को विश्वास में होकर प्रतिक्रिया दी जाती है, तो परिणाम सदैव उद्धार और भले कार्यों के रूप में होता है।

तौभी, पौलुस के शब्दों की चीरा-फाड़ी करने वाले अपने संदर्भ से इस तरह के सूत्र को तैयार करते हैं :

अनुग्रह + विश्वास – आज्ञाकारिता = उद्धार

अर्थात् अनुग्रह और विश्वास मिलाकर तथा आज्ञाकारिता को घटाकर परिणाम उद्धार निकलता है। बाइबल के संदर्भ में यह एक विधर्म है।

पौलुस के शब्दों पर कुछ और संदर्भ को पढ़ने पर हम जल्द ही यह जान पाते हैं कि इफिसुस की स्थिति उसी के समान थी जैसी पौलुस द्वारा प्रचार किये जाने वाले स्थानों की थी अर्थात् यहूदी पौलुस के नये परिवर्तितों को यह सिखा रहे थे कि उद्धार पाने के लिए उन्हें खतना, कराने के साथ-साथ मूसा की कुछ विधियों का पालन करना ज़रूरी है। खतने और विधिगत कार्यों को लेकर ही पौलुस ने लिखा कि 'कार्य' हमें नहीं बचाते हैं (देखें इफि. 2:11-22)।

यदि हम कुछ और आगे, इफिसियों को लिखे पौलुस के संदर्भ को पढ़ते हैं तो हम बहुत स्पष्टता से देखते हैं कि पौलुस ने विश्वास किया कि पवित्रता उद्धार के लिए अनिवार्य थी :

> और जैसा पवित्र लोगों को योग्य है, वैसा तुम में व्यभिचार और किसी प्रकार के अशुद्ध काम, या लोभ की चर्चा तक न हो। और न निर्लज्जता, न मूढ़ता की बातचीत की, न ठट्ठे की, क्योंकि ये बातें सोहती नहीं, वरन् धन्यवाद ही सुना जाए। *क्योंकि तुम जानते हो, कि किसी व्यभिचारी, या अशुद्ध जन, या लोभी मनुष्य की,*

> *जो मूरत पूजने वाले के बराबर है, मसीह और परमेश्वर के राज्य में मीरास नहीं। कोई तुम्हें व्यर्थ बातों से धोखा न दे; क्योंकि इन ही कामों के कारण परमेश्वर का क्रोध आज्ञा न माननेवालों पर भड़कता है* (इफि. 5:3-6, पर बल दिया गया है)।

यदि पौलुस यह विश्वास करता है कि परमेश्वर का अनुग्रह उस प्रत्येक व्यक्ति को बचाएगा जो अपश्चात्तापी रूप से व्यभिचारी, अशुद्ध या लोभी हो तो उसने कभी भी इन शब्दों को नहीं लिखा होता। इफिसियों को लिखे गए पौलुस के पूरे पत्र का अभिप्राय इफिसियों 2:8-9 में सही तरह से समझा जा सकता है।

गलातियों की असफलता

The Galatian Fiasco

गलातियों को लिखे गए पौलुस के पत्र के शब्दों में इसी तरह से संदर्भ से बाहर होकर व्याख्या की गई है, जिसका परिणाम सुसामाचार का विकृत रूप रहा है, एक ऐसी चीज़ जिसकी पौलुस गलातियों को लिखे अपने पत्र में सही करने की आशा रहा था।

गलातियों को लिखे पौलुस के पत्र का समस्त उद्देश्य ''उद्धार विश्वास से है न कि व्यवस्था के कार्यों से।'' लेकिन क्या पौलुस का अभिप्राय यह था कि उसके पाठक यह परिणाम निकालें कि परमेश्वर के राज्य में प्रवेश करने के लिए पवित्रता ज़रूरी नहीं थी? निश्चय ही ऐसा नहीं है।

सबसे पहले, हम इस पर ध्यान दें कि पौलुस एक बार पुन: उन यहूदियों का सामना कर रहा था जो गलातिया में आकर नये परिवर्तितों को यह सिखा रहे थे कि खतना किये बिना और मूसा की व्यवस्था का पालन किये बिना वे उद्धार नहीं पा सकते थे। पौलुस ने खतने के इस विशिष्ट विषय का वर्णन अपने पत्र में बार-बार किया है जो यहूदी विधिवादियों के लिए प्राथमिक महत्व का कारण था (देखें गल. 2:3; 7-9,12; 5:2-3, 6,11; 6:12-13,15)। पौलुस को यह चिन्ता नहीं थी गलातिया के विश्वासी मसीह के आज्ञाकारी बनते जा रहे थे; उसकी चिन्ता का कारण यह था कि वे अपने उद्धार के लिए मसीह में विश्वास नहीं रख रहे थे, बल्कि खतने और मूसा की व्यवस्था का पालन करने के अपने स्वयं के क्षीण प्रयासों पर।

गलातियों को लिखे पौलुस के पूरे पत्र पर विचार करने पर, हम ध्यान दें कि वह अध्याय 5 में लिखता है:

> और यदि तुम आत्मा के चलाए चलते हो, तो व्यवस्था के आधीन न रहे। शरीर के काम तो प्रगट हैं, अर्थात् व्यभिचार, गन्दे काम, लुचपन, मूर्तिपूजा, टोना, बैर, झगड़ा, ईर्ष्या, क्रोध, विरोध, फूट,

> विधर्म, डाह, मतवालापन, लीलाक्रीड़ा, और इन के ऐसे और और काम हैं, इन के विषय में मैं तुमको पहिले से कह देता हूं जैसा पहिले कह भी चुका हूं, *कि ऐसे ऐसे काम करने वाले परमेश्वर के राज्य के वारिस न होंगे* (गल. 5:18-21, पर बल दिया गया है)।

यदि पौलुस गलातियों को यह बताना चाहता था कि वे अपवित्र होकर भी स्वर्ग जा सकते हैं, तो उसने कभी भी इस तरह के शब्दों को नहीं लिखा होता। उसका संदेश यह नहीं था कि अपवित्र लोग स्वर्ग जा सकते हैं, बल्कि यह कि, वे जो परमेश्वर के अनुग्रह और मसीह के बलिदान को रद्द करते हुए अपने उद्धार को खतने और मूसा की व्यवस्था के द्वारा प्राप्त करने का प्रयास करते हैं वे उद्धार नहीं पा सकते। खतना उद्धार को नहीं लाता। यीशु में विश्वास ही उद्धार को लाता है जो कि विश्वासियों को पवित्र व नई सृष्टि के रूप में बदलता है :

> क्योंकि न खतना, और न खतना रहित कुछ है, परन्तु नई सृष्टि (गल. 6:15)।

अत:, यह सब दिखाता है कि पवित्रशास्त्र की व्याख्या करते समय संदर्भ पर ध्यान देना कितना ज़रूरी है। सुसमाचार को विकृत करने का एकमात्र तरीका परमेश्वर के वचन को लेकर संदर्भ की उपेक्षा करना है। हमें प्रभु के उन सेवकों पर आश्चर्य होता है जो इसे इतने स्पष्ट रूप में करते हैं जो किसी और तरह से नहीं बल्कि स्वेच्छा से हो सकता है।

उदाहरण के लिए, मैंने एक बार एक प्रचारक को यह कहते सुना कि सुसमाचार का प्रचार करते समय हमें कभी भी परमेश्वर के क्रोध के बारे में नहीं बताना चाहिए, क्योंकि बाइबल कहती है कि "परमेश्वर की कृपा मुझे मन-फिराव को सिखाती है" (रोमि. 2:4)। अत: उसके अनुसार, सुसमाचार को बताने का उचित तरीका केवल परमेश्वर के प्रेम और भलाई को बताना है। यही लोगों को पश्चात्ताप की ओर लेकर जाएगा।

लेकिन जब हम उस एक ही पद के संदर्भ को पढ़ते हैं जिसे प्रचारक ने रोमियों के दूसरे अध्याय से उदधृत किया था, हम पाते हैं कि इसमें परमेश्वर के न्याय और पवित्र क्रोध को ढापा गया है। तात्कालिक संदर्भ प्रगट करता है कि इस बात की कोई संभावना नहीं है कि पौलुस का अभिप्राय प्रचारक के समान ही था :

> और हम जानते हैं कि ऐसे-ऐसे काम करनेवालों पर परमेश्वर की ओर से ठीक ठीक दण्ड की आज्ञा होती है। और हे मनुष्य, तू जो ऐसे-ऐसे काम करनेवालों पर दोष लगाता है, और आप वे ही काम करता है; क्या यह समझता है, कि तू परमेश्वर के दण्ड की आज्ञा से बच जाएगा? क्या तू उसकी कृपा, और सहनशीलता,

> और धीरज रूपी धन को तुच्छ जानता है? और क्या यह नहीं समझता *कि परमेश्वर की कृपा तुझे मन-फिराव को सिखाती है?* पर अपनी कठोरता और हठीले मन के अनुसार उसके क्रोध के दिन के लिये, जिस में परमेश्वर का सच्चा न्याय प्रगट होगा, अपने निमित्त क्रोध कमा रहा है। वह हर एक को उसके कामों के अनुसार बदला देगा। जो सुकर्म में स्थिर रहकर महिमा और आदर और अमरता की खोज में हैं, उन्हें वह अनन्त जीवन देगा। पर जो विवादी हैं, और सत्य को नहीं मानते, वरन अधर्म को मानते हैं, उन पर क्रोध और कोप पड़ेगा। *और क्लेश और संकट हर एक मनुष्य के प्राण पर जो बुरा करता है आएगा,* पहले यहूदी पर फिर यूनानी पर (रोमि. 2:2-9, पर बल दिया गया है)।

परमेश्वर की दया के बारे में पौलुस का हवाला परमेश्वर को अपने क्रोध करने में देरी करते हुए दिखाता है। और कोई भी आश्चर्य कर सकता है कि कोई भी सेवक बाइबल के इतने बड़े संदर्भ के बारे में इतना बेतुका कथन कैसे कह सकता है, जो कि ऐसे प्रचारकों के उदाहरणों से भरपूर है जिन्होंने पापियों को सार्वजनिक रूप से पश्चात्ताप करने की चुनौती दी।

पवित्रशास्त्र की अनुकूलता
Scripture's Consistency

क्योंकि बाइबल एक ही व्यक्ति द्वारा प्रेरित है, इसी कारण इसके संदेश में अनुकूलता है। इसलिये हम किसी भी दिये गए परिच्छेद पर परमेश्वर के संदर्भ की सहायता से उसे समझने का भरोसा कर सकते हैं। परमेश्वर ऐसा कुछ नहीं कहता जो एक पद में कुछ हो और दूसरे पद में उसके प्रतिकूल हो, और यदि हमें लगे कि उसने ऐसा किया है तो हमें तब तक संदर्भ का अध्ययन करते रहना है जब तक कि दोनों समानान्तर न लगने लग जाएं। उदाहरण के लिए, यीशु द्वारा दिये गए कई पहाड़ी उपदेशों में, पहले ऐसा दिख सकता है कि मानो परमेश्वर पुराने नियम की नैतिक व्यवस्था के नियम में सुधार करते हुए भी उसके विरोध में हो। उदाहरण के लिए:

> तुम सुन चुके हो, कि कहा गया था कि "आँख के बदले आँख और दाँत के बदले दाँत।" परन्तु मैं तुम से यह कहता हूं, कि बुरे का सामना न करना; परन्तु जो कोई तेरे दहिने गाल पर थप्पड़ मारे, उसकी ओर दूसरा भी फिर दे (मत्ती 5:38-39)।

यीशु ने प्रत्यक्ष रूप में मूसा की व्यवस्था को उद्धृत किया और उसके बाद एक कथन कहा जो उसके द्वारा उद्धृत किये गए नियम के प्रतिकूल प्रतीत होता था। जो उसने कहा हमें उसका अर्थ कैसे लगाना है? क्या परमेश्वर ने मूल नैतिकता को लेकर अपने मन

को बदल लिया है? क्या बदला लेना पुरानी वाचा के अन्तर्गत ग्रहणीय था, नई में नहीं?

यीशु प्राथमिक रूप से अपने शिष्यों से बोल रहा था (देखें मत्ती 5:1-2), वे लोग जिन पर परमेश्वर के वचन का प्रगटीकरण केवल उन फरीसियों और शास्त्रियों के द्वारा होता था जो उनके आराधनालयों में सिखाते थे। वहां उन्होंने परमेश्वर की व्यवस्था से इस तरह से सुना था, ''आँख के बदले आँख, और दाँत के बदले दाँत,'' एक ऐसी आज्ञा जिसके अर्थ को शास्त्रियों और फरीसियों ने इसके संदर्भ की उपेक्षा करने के द्वारा घुमा दिया था। परमेश्वर का अभिप्राय: इस आज्ञा की यह व्याख्या किये जाने से नहीं था कि उसके लोग हमेशा गलत कामों का बदला लेते रहें। तथापि, उसने मूसा की व्यवस्था में कहा कि बदला लेना उसका काम है (व्यवस्था. 32:35), और यह कि उसके लोगों को अपने शत्रुओं का भला करना चाहिए (देखें निर्ग. 23:4-5)। लेकिन फरीसी और शास्त्रियों ने उन आज्ञाओं की उपेक्षा कर परमेश्वर के ''आंख के बदले आंख' नियम के लिए अपनी स्वयं की व्याख्या की थी, वह चीज़ जिसने उन्हें व्यक्तिगत बदला लेने की सुविधा दी थी।[35] उन्होंने संदर्भ की उपेक्षा की थी।

''आंख के बदले आंख और दांत के बदले दांत'' के बारे में परमेश्वर की आज्ञा उसकी उन आज्ञाओं के संदर्भ में पाई जाती है जो इस्राएल के न्यायालयों में न्याय को निर्धारित करती है (देखें निर्ग. 21:22-24; व्यवस्था. 19:15-21)। न्यायालय प्रणाली के लिए प्रबन्धन स्वयं में परमेश्वर की ओर से व्यक्तिगत बदले की अस्वीकृति का प्रगटीकरण है। निष्पक्ष प्रमाण की जांच करनेवाले निष्पक्ष न्यायी अपराधी व पक्षपाती व्यक्तियों की तुलना में न्याय प्रणाली का उचित ढंग से प्रबन्धन करने के योग्य होते हैं। परमेश्वर यह अपेक्षा करता है कि न्यायालय और न्यायी अपराध के अनुसार निष्पक्ष रूप से दण्ड को थोड़ा थोड़ा करके बांटें। इसलिए ''आँख के बदले आँख और दाँत के बदले दाँत।''

अत:, इस तरह से हम उसे तालमेल करा पाने में समर्थ हो पाते हैं जो पहली दृष्टि में प्रतिकूल दिखाई देता है। यीशु केवल अपने श्रोताओं की सहायता कर रहा था—वे लोग जो अपने जीवनों में झूठी शिक्षा को लेकर बैठे थे, उन्हें यह समझाते हुए कि परमेश्वर का सत्य व्यक्तिगत बदले को लेकर उनके साथ होगा, जिसे मूसा की व्यवस्था में पहले से ही प्रगट कर दिया गया था, लेकिन फरीसियों द्वारा जिसे घुमा दिया गया था। यीशु मूसा को दी गई व्यवस्था का विरोध नहीं कर रहा था। वह केवल उसके मूल अर्थ को प्रगट कर रहा था।

यह हमारी उसे भी समझने में सहायता करता है जिसकी अपेक्षा यीशु हमसे प्रमुख झगड़ों के संबन्ध में करता है, न्यायालय के मामले की ओर लेकर जाने वाली चीज़। परमेश्वर ने इस्राएलियों से अपने सह-इस्राएलियों के अपराध की देखी अनदेखी करने

35. इस पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि यीशु ने पहले अपने संदेश में कहा कि जब तक उसके श्रोताओं की धार्मिकता फरीसियों और शास्त्रियों से बढ़कर न हो, वे स्वर्ग में प्रवेश नहीं कर पाएंगे (देखें मत्ती 5:20)। इसके बाद यीशु शास्त्रियों और फरीसियों की कमी को प्रगट करता रहा।

की अपेक्षा नहीं की थी, नहीं तो वह न्याय प्रणाली की स्थापना नहीं करता। इसी तरह से परमेश्वर मसीहियों से अपने सह-मसीही के अपराध की देखी-अनदेखी करने की अपेक्षा नहीं करता। नया नियम बताता है कि असंगत मसीही सह-विश्वासियों की मध्यस्थ सहायता का प्रयोग करता है (देखें 1 कुरि. 6:1-6)। और एक मसीही का एक अविश्वासी के साथ प्रमुख अपराध पर झगड़े को लेकर न्यायालय जाना गलत नहीं है। प्रमुख अपराध आपकी आँख या दाँत को तोड़ने वाली चीज़ें होती हैं। छोटे अपराध में शामिल थप्पड़ खाना, या किसी भी छोटी चीज़ को लेकर निवेदन करना (जैसे आपकी कमीज़) या एक मील चलने के लिए दबाव डालना। परमेश्वर चाहता है कि उसके लोग उसकी नकल करते हुए विचारहीन पापियों और दुष्ट लोगों के प्रति असाधारण अनुग्रह को प्रगट करें।

इन्हीं सब चीज़ों के साथ, कुछ ऐसे विश्वासी भी रहे हैं जो उस व्यक्ति के प्रति कोई भी कानूनी अभियोग नहीं लगाते जिसने उनके यहां चोरी की, उनका सोचना है कि ऐसा करते हुए वे अपने 'दूसरे' गाल को उसकी तरफ फेर रहे थे, जबकि वास्तव में वे ऐसा करके एक चोर को फिर से चोरी करने के योग्य बना रहे होते हैं, उसे यह सिखाते हुए कि अपराध करने का कोई परिणाम नहीं होता। इस तरह के मसीही उन सभी लोगों के साथ प्रेम में नहीं चलते जिनके घर इसी चोर ने चोरी की होती है। परमेश्वर चोरों के लिए चाहता है कि वे पश्चात्ताप करने के साथ साथ न्याय के अधीन भी आएं। लेकिन जब कोई आपके साथ कोई छोटा अपराध करे, जैसे कि आप के गाल पर थप्पड़ मारे, तो न तो उसे न्यायालय लेकर जाएं और न ही पलटकर उसके गाल पर थप्पड़ मारें। उसे करुणा और प्रेम दिखाएं।

नये के प्रकाश में पुराने की व्याख्या

Interpreting the Old in Light of the New

न केवल हमें पुराने नियम के प्रकाश में नये नियम की व्याख्या करनी चाहिए, हमें नये नियम के प्रकाश में पुराने नियम की भी सदैव व्याख्या करनी चाहिए। उदाहरण के लिये, कुछ विश्वासियों ने मूसा के भोजन संबन्धी नियमों को पढ़कर यह परिणाम निकाला है कि मसीहियों को उन नियमों के अनुसार अपने भोजन संबन्धी नियमों को नियन्त्रित करना चाहिए । तौभी, यदि वे नये नियम के केवल दो ही परिच्छेदों को पढ़ते तो यह जान पाते कि मूसा के भोजन संबन्धी नियम नई वाचा के अधीन आनेवालों पर लागू नहीं होते हैं।

> उसने (यीशु ने) उनसे कहा; क्या तुम भी ऐसे ना समझ हो? क्या तुम नहीं समझते, जो वस्तु बाहर से मनुष्य के भीतर जाती है, वह उसे अशुद्ध नहीं कर सकती? क्योंकि वह उसके मन में नहीं, परन्तु पेट में जाती है, और संडास से निकल जाती है? यह कहकर

> उसने सब भोजन वस्तुओं को शुद्ध ठहराया (मरकुस 7:18-19)।
>
> परन्तु आत्मा स्पष्टता से कहता है, कि आनेवाले समयों में कितने लोग भरमाने वाली आत्माओं और दुष्टात्माओं की शिक्षाओं पर मन लगाकर विश्वास से बहक जाएंगे। यह उन झूठे मनुष्यों के कपट के कारण होगा, जिनका विवेक मानो जलते हुए लोहे से दागा गया है। जो ब्याह करने से रोकेंगे, भोजन की कुछ वस्तुओं से परे रहने की आज्ञा देंगे; जिन्हें परमेश्वर ने इसलिये सृजा कि विश्वासी और सत्य के पहचानने वाले उन्हें धन्यवाद के साथ खाएं। क्योंकि परमेश्वर की सृजी हुई हर एक वस्तु अच्छी है। और कोई वस्तु अस्वीकार करने के योग्य नहीं, पर यह कि धन्यवाद के साथ खाई जाए। क्योंकि परमेश्वर के वचन और प्रार्थना के द्वारा शुद्ध हो जाती है (1 तीमुथियुस 4:1-5)।

नई वाचा के अन्तर्गत, हम मूसा की व्यवस्था के अधीन नहीं हैं, बल्कि मसीह की व्यवस्था के (देखें 1 कुरि. 9:20-21)। यद्यपि यीशु ने निश्चय ही मूसा की व्यवस्था के नैतिक पहलुओं का समर्थन किया (मसीह की व्यवस्था में उन्हें सम्मिलित करते हुए), तौभी न तो उसने और न ही प्रेरितों ने मसीहियों को यह सिखाया कि मसीही मूसा के भोजन संबन्धी नियमों को पूरा करने के लिए बंधे हुए हैं।

तौभी, यह स्पष्ट है कि आरम्भिक मसीही, व सभी परिवर्तित यहूदी अपनी सांस्कृतिक धारणाओं के कारण पुराने नियम के भोजन संबन्धी नियमों को पूरा करते रहे थे (देखें प्रेरित. 10:9-14)। और अन्यजातियों के यीशु में विश्वास लाने पर, आरम्भिक यहूदी मसीहियों ने उन्हें सीमित रूप में मूसा की व्यवस्था का अनुसरण करने को कहा (देखें प्रेरित. 15:1-21)। अत: मसीहियों के तब तक मूसा के भोजन संबन्धी नियमों को मानने में कोई गलती नहीं है जब तक कि उनका विश्वास यह न हो कि उन नियमों का पालन उन्हें बचा सकता है।

कुछ आरम्भिक मसीही यह भी स्वीकार करते थे कि मूरतों के आगे बलिदान किये गए मांस को खाना गलत था। पौलुस ने विश्वासियों का अपने कमज़ोर विश्वास वाले भाइयों के विवेक को हानि न पहुंचाते हुए उनके प्रति प्रेम में चलने का निर्देश दिया (देखें रोमि. 14:1)। यदि एक व्यक्ति परमेश्वर के सम्मुख अपनी धारणा के कारण किसी विशिष्ट भोजन से दूर रहता है, तो उसके समर्पण की सराहना की जानी चाहिए, न कि उसकी गलतफहमी के कारण उसे दण्डित किया जाना चाहिए। इसी तरह, जो किसी विशिष्ट भोजन से दूर रहते हैं उन्हें उन पर किसी तरह का दोष नहीं लगाना चाहिए जो उस भोजन से दूर नहीं रहते हैं। दोनों ही समूहों को एक दूसरे के प्रति प्रेम में चलना चाहिए क्योंकि इसकी आज्ञा परमेश्वर की ओर से दी गई है (देखें रोमि. 14:1-23)।

किसी भी तरह से बाइबल के उन्नतिशील प्रगटीकरण होने के कारण, हमें सदैव

पुराने प्रगटीकरण (पुराने नियम) की व्याख्या नये प्रगटीकरण (नये नियम) के प्रकाश में करनी चाहिए। परमेश्वर द्वारा दिया गया इनमें से कोई भी प्रगटीकरण परस्पर विरोधी नहीं है; यह सदैव प्रशंसात्मक होता है।

सांस्कृतिक और ऐतिहासिक संदर्भ
Cultural and Historical Context

जब भी संभव हो, हमें पवित्रशास्त्र के उन सांस्कृतिक और ऐतिहासिक संदर्भों पर भी विचार करना चाहिए जिनका हम अध्ययन कर रहे होते हैं। बाइबल के सांस्कृतिक, भौगोलिक और ऐतिहासिक पक्षों के बारे में कुछ विशेष बातों को जानते हुए हमें उन चीज़ों के बारे में भी पता चलता है जिनसे हम अकसर चूक जाते हैं। बेशक इसके लिए बाइबल की अतिरिक्त पुस्तकों की भी ज़रूरत होती है। एक अच्छा बाइबल अध्ययन सामान्यता इस क्षेत्र में सहायक होता है।

यहां कुछ उदाहरण दिये गए हैं कि ऐतिहासिक और सांस्कृतिक जानकारी बाइबल को पढ़ते समय हमें कैसे भ्रमित होने से बचा सकती है :

(1) हम पवित्रशास्त्र में कई बार लोगों के घर की छत पर जाने (देखें प्रेरित. 10:9) या छतों को खोलने (देखें मर. 2:4) के बारे में पढ़ते हैं। इससे यह जानने में सहायता मिलती है कि बाइबल के दिनों में इस्राएल में छतें सामान्यता समतल होती थीं, और यह भी कि बहुत से घरों के बाहर छत पर जाने के लिए सीढ़ियां भी होती थीं। यदि हम यह सब नहीं जानते, तो हम किसी भी बाइबल चरित्र के घर की छत पर खड़े होने या चिमनी से लटके होने की कल्पना कर सकते हैं।

(2) मरकुस 11:12-14 में हम पढ़ते हैं कि यीशु ने एक अंजीर के वृक्ष को अंजीर न लाने के कारण शाप दिया जबकि 'अंजीरों का मौसम भी नहीं था।' इससे यह जानने में सहायता मिलती है कि अंजीर के वृक्ष में मौसम न होने पर भी कुछ फल अवश्य आते हैं। अत: यीशु की फल की अपेक्षा करना गलत नहीं था।

(3) लूका 7:37-48 में हम एक स्त्री के बारे में पढ़ते हैं जिसने उस फरीसी के घर में प्रवेश किया जहां यीशु भोजन खा रहा था। पवित्रशास्त्र बताता है कि यीशु के पीछे खड़े होकर रोते हुए, उसने अपने आंसुओं से उसके पांवों को भिगोया, अपने बालों से उन्हें पोंछा, और उन्हें चूमा और इससे उनका अभिषेक किया। हमें आश्चर्य होता है कि यीशु के भोज-मेज़ पर बैठे होने के समय में ऐसा कैसे हो सकता है। क्या वह मेज़ के नीचे से रेंगकर गई थी? वह दूसरे शिष्यों के पैरों के बीच से होकर कैसे यीशु तक पहुंच पाई थी?

जवाब लूका के इस कथन में मिलता है (लूका 7:37)। उन दिनों भोजन करने की परंपरा में एक व्यक्ति भोजन की निचली मेज़ पर अक्षरश: लेटी हुई अवस्था

में स्वयं को एक हाथ से उठाते हुए दूसरे हाथ से भोजन करता था। यीशु की इस तरह की मुद्रा में ही स्त्री ने उसका अभिषेक किया था।

इससे हमें यह जानने में सहायता मिलती है कि अन्तिम भोज के समय प्रश्न करते हुए यूहन्ना कैसे उसकी छाती की ओर झुका हुआ था। यूहन्ना यीशु की ओर मुंह करके लेटा हुआ था जिसके कारण वह यीशु की छाती की ओर मुंह करके यह प्रश्न पूछ सका (देखें यूहन्ना 13:23-25)। 'दा विन्सी' का अन्तिम भोज का चित्र जिसमें यीशु को अपने शिष्यों के साथ भोजन-मेज़ पर बैठे दिखाया गया है, यह चित्रकार की बाइबल संबन्धी अज्ञानता को दिखाता है। उसे कुछ ऐतिहासिक संदर्भों की आवश्यकता थी!

वस्त्रों के बारे में एक सामान्य प्रश्न

A Common Question About Clothes

विश्व के पास्टरों द्वारा एक प्रश्न जो मुझसे सदैव किया जाता है: ''क्या स्त्रियों के लिए ट्राउज़र या पेंट पहनना उचित है, जबकि बाइबल स्त्रियों को पुरुषों के वस्त्र पहनने से मना करती है?''

यह एक अच्छा प्रश्न है जिसका जवाब व्याख्या के कुछ नियमों और सांस्कृतिक संदर्भ को लागू करने के द्वारा दिया जा सकता है।

आइये सबसे पहले बाइबल की स्त्रियों के पुरुषों के वस्त्र पहनने की मनाही पर विचार करें:

> कोई स्त्री पुरुष का पहिरावा न पहने, और न कोई पुरुष स्त्री का पहिरावा पहने; क्योंकि ऐसे कामों के सब करने वाले तेरे परमेश्वर यहोवा की दृष्टि में घृणित हैं (व्यवस्था. 22:5)।

हमें आरम्भ यह पूछते हुए करना चाहिए, ''इस आज्ञा को देने के पीछे परमेश्वर का अभिप्राय क्या था? क्या उसका उद्देश्य स्त्रियों को पेंट पहनने से दूर रखने का ही था?

नहीं, उसका अभिप्राय यह नहीं रहा था, क्योंकि परमेश्वर ने जिस समय इसे कहा था उस समय इस्राएल में कोई भी पुरुष पेंट नहीं पहनता था। पेंट को पुरुष के वस्त्र के रूप में नहीं देखा गया था। वास्तव मे, बाइबल के दिनों में पुरुष जो वस्त्र पहनते थे वह आज के दिनों के हिसाब से स्त्री वाले वस्त्र अधिक प्रतीत होते हैं। अत: ऐतिहासिक व सांस्कृतिक जानकारी उसकी सही-सही व्याख्या करने में हमारी सहायता करते हैं जो कुछ परमेश्वर कहने का प्रयास कर रहा है।

अत: परमेश्वर का अभिप्राय क्या *था?*

हमने पढ़ा कि विपरीत लिंग के वस्त्र पहनने वाले परमेश्वर की दृष्टि में *घृणित*

हैं। यह एक गंभीर विषय है। यदि एक पुरुष एक स्त्री के दुपट्टे को अपने सिर पर तीन सैकेण्ड के लिए रख लेता है तो क्या यह परमेश्वर के लिये घृणित है? यह संदेहपूर्ण प्रतीत होता है।

इससे यह प्रतीत होगा कि परमेश्वर उन लोगों के विरुद्ध था जो ऐसा जानबूझकर करते हैं जिससे वे विपरीत लिंग के दिख सकें। कोई ऐसा क्यों करना चाहेगा? इसका एकमात्र कारण समान लिंग वाले को बहकाना है, एक यौन विकृति जिसे *भिन्न लिंग वस्त्र धारण* करना कहा गया है। मेरे विचार से हम समझ सकते हैं कि *इसे* कैसे परमेश्वर के लिए घृणित काम रूप में देखा जाएगा।

अत:, कोई भी यह निष्कर्ष नहीं निकाल सकता कि व्यवस्थाविवरण 22:5 के आधार पर स्त्रियों का पेंट पहनना सही नहीं है जब तक कि वह इसे भिन्न लिंग वस्त्र धारण के उद्देश्य से न करे। पेंट पहनने पर पुरुष समान दिखाई देने पर वह कोई पाप नहीं करती है।

बेशक, पवित्रशास्त्र सिखाता है कि स्त्रियों को सुहावने वस्त्र पहनने चाहिए (देखें 1 तीमु. 2:9), अत: त्वचा से चिपकी हुई पेंट (त्वचा से चिपके अन्य वस्त्र और स्कर्ट) अनुचित हैं क्योंकि वे पुरुषों को आकर्षित करने वाले होते हैं। पश्चिमी देशों की अधिकांश स्त्रियों द्वारा पहने जाने वाले वस्त्र उचित नहीं होते, इस तरह के वस्त्र विकासशील देशों की वेश्याएं पहना करती हैं। किसी भी मसीही स्त्री को 'कामुक' दिखने के लिए इस तरह के वस्त्र नहीं पहनने चाहिए।

कुछ दूसरे विचार
A Few Other Thoughts

यह रोचक है कि चीन के पास्टरों ने मुझसे कभी भी स्त्रियों के वस्त्रों को लेकर कोई प्रश्न नहीं किया। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि चीनी स्त्रियां काफी समय से पेंट पहनती आ रही हैं। मुझसे स्त्रियों के वस्त्रों और पेंट को लेकर केवल उन्हीं देशों में प्रश्न किये गए हैं जहां स्त्रिया पेंट नहीं पहनती हैं। यह उनकी व्यक्तिगत सांस्कृतिक प्रवृत्ति को दिखाता है।

मेरे लिये यह भी रोचक है कि मुझसे इसी तरह का प्रश्न म्यानमार की सेविकाओं द्वारा कभी नहीं पूछा गया है, जहां पुरुष पारम्परिक रूप से वह पहनते हैं जिसे हम स्कर्ट कहेंगे, लेकिन वे उसे *लुंगी* कहते हैं। अत: स्त्रियों और पुरुषों के वस्त्र प्रत्येक संस्कृति में भिन्न-भिन्न हैं। इसलिए हमें अपनी सांस्कृतिक समझ को बाइबल पर थोपने का प्रयास नहीं करना चाहिए।

अन्तत:, मुझे इस बात की हैरानी होती है कि क्या अधिकांश पुरुष यह चाहते हैं कि स्त्रियां व्यवस्थाविवरण 22:5 के आधार पर पेंट न पहनें, वे स्वयं पर लैव्यव्यवस्था 19:27 के प्रतिबन्ध को अनुभव नहीं करते हैं:

> अपने सिर में घेरा रखकर न मुंड़ाना, और न अपने गाल के बालों को मुंड़ाना (लैव्य. 19:27)।

पुरुष, लैव्यव्यवस्था 19:27 की अवज्ञा करते हुए परमेश्वर द्वारा दी गई अपनी दाड़ी को कैसे मुंड़ा सकता है, वह दाड़ी जो उसे स्त्रियों से पृथक करती है, और तत्पश्चात् वह स्त्रियों पर पुरुष समान दिखने को पेंट पहनने का आरोप कैसे लगा सकते हैं? यह पाखण्डपूर्ण प्रतीत होगा!

सौभाग्य से, एक छोटी सी ऐतिहासिक जानकारी लैव्यव्यवस्था 19:27 में दिये गए परमेश्वर के अभिप्राय को समझने में हमारी कुछ सहायता करती है। दाड़ी काटना एक अन्यजाति परम्परा थी। परमेश्वर नहीं चाहता था कि उसके लोग अन्यजाति मूर्ति आराधकों के समान दिखें।

कौन बोल रहा है?

Who is Speaking?

किसी भी बाइबल परिच्छेद में हमें यह ध्यान देना है कि बोलने वाला कौन है। यद्यपि बाइबल की प्रत्येक चीज़ बाइबल द्वारा प्रेरित होनी चाहिए, तौभी बाइबल में पाई जाने वाली प्रत्येक चीज़ परमेश्वर द्वारा प्रेरित नहीं है।

पवित्रशास्त्र के अधिकांश परिच्छेदों में, लोगों के निरूत्साहित शब्दों का विवरण है। इसी कारण हमें यह नहीं सोचना चाहिए कि बाइबल में जो कुछ भी लोगों द्वारा बोला गया वह परमेश्वर द्वारा प्रेरित है।

उदाहरण के लिए, कुछ लोग अय्यूब और उसके मित्रों को परमेश्वर द्वारा प्रेरित शब्द कहकर उद्धरित करने की गलती करते हैं। इसे एक गलती मानने के दो कारण हैं। सर्वप्रथम, अय्यूब और उसके मित्रों ने चौंतीस अध्यायों तक वाद-विवाद किया। वे असहमत थे। निस्संदेह उनके द्वारा कही गई प्रत्येक चीज़ परमेश्वर की ओर से प्रेरित नहीं हो सकती थी क्योंकि परमेश्वर स्वयं अपना विरोध नहीं करता।

दूसरा, अय्यूब की पुस्तक के समापन पर, परमेश्वर स्वयं बोलते हुए अय्यूब और उसके मित्रों को उन कहीं गई चीज़ों के लिए डांटता है जो सही नहीं थीं (देखें अय्यूब 38-42)।

नये नियम का अध्ययन करते समय हमें इसी तरह की सावधानी लेनी चाहिए। कई मामलों में, पौलुस ने सादगी से कहा कि उसके लेखों के वे भाग उसके अपने विचार थे (देखें 1 कुरि. 7:12, 25-26,40)।

किसे संबोधित किया गया है?

Who is Being Addressed?

हमें न केवल यह पूछना चाहिए कि किसी भी बाइबल परिच्छेद में कौन बोल

रहा है, बल्कि हमें इस पर भी ध्यान देना चाहिए कि इसमें किसे संबोधित किया गया है। यदि हम ऐसा नहीं करते, तो हम किसी भी चीज़ का गलत अर्थ निकाल सकते हैं। जैसे, कोई चीज़ हम पर लागू न होती हो तौभी हम यह अर्थ निकालेंगे कि यह हम पर लागू होती है। या कोई चीज़ हम पर लागू होती हो और हम यह अर्थ निकालेंगे कि यह हम पर लागू नहीं होती।

उदाहरण के लिए, कुछ भजन संहिता 37:4 को स्वयं पर लागू करने का विश्वास करते हुए उस पर एक प्रतिज्ञा के रूप में दावा करते हैं।

> वह तेरे मनोरथों को पूरा करेगा (भजन. 37:4)।

लेकिन क्या यह प्रतिज्ञा प्रत्येक उस व्यक्ति पर लागू होती है जो इसे पढ़ता या जानता है? नहीं, संदर्भ को पढ़ने पर हम पाते हैं कि यह केवल उन्हीं लोगों पर लागू होती है जो इन पांच शर्त्तों को पूरा करते हैं :

> यहोवा पर भरोसा रख, और भला कर; देश में बसा रह, और सच्चाई में मन लगाए रह। यहोवा को अपने सुख को मूल जान और वह तेरे मनोरथों को पूरा करेगा (भजन. 37:-3-4)।

अत:, हम देखते हैं कि यह ध्यान देना कितना महत्वपूर्ण है कि किसे संबोधित किया गया है।

एक और उदाहरण है :

> पतरस उससे (यीशु से) कहने लगा कि ''देख, हम तो सब कुछ छोड़कर तेरे पीछे हो लिए हैं।'' यीशु ने कहा, ''मैं तुम से सच कहता हूं, कि ऐसा कोई नहीं, जिसने मेरे और सुसमाचार के लिए घर या भाइयों या बहनों या माता या पिता या लड़केवालों या खेतों को छोड़ दिया हो और अब इस समय सौ गुणा न पाए, घरों और भाइयों और बहनों और माताओं और लड़केवालों और खेतों को, पर उपद्रव के साथ और परलोक में अनन्त जीवन'' (मर. 10:28-30)।

जब कोई किसी को सुसमाचार के प्रचार में धन का सहयोग देता है तो कुछ दायरों में ''सौ गुणा वापसी'' का दावा किया जाता है। लेकिन क्या यह प्रतिज्ञा इस तरह के लोगों पर लागू होती है? नहीं, इसमें उन लोगों को संबोधित किया गया है जिन्होंने वास्तव में पतरस के समान सुसमाचार प्रचार कार्य के लिए अपने परिवारों, खेतों और घरों को छोड़ दिया है, जिसने यीशु से पूछा था कि उसका और शिष्यों का प्रतिफल क्या होगा?

यह रोचक है कि इन सौ गुणा वापसी का प्रचार करनेवालों का ध्यान प्राथमिक रूप से घरों और खेतों की ओर नहीं होता, और न ही कभी प्रतिज्ञा किये गए बच्चों

और सतावों पर। निस्संदेह, यीशु यह प्रतिज्ञा नहीं कर रहा था कि अपना घर छोड़ने वालों को बदले में सौ घर मिलेंगे। वह यह प्रतिज्ञा कर रहा था कि अपने घरों और परिवारों को छोड़ने पर, नये आत्मिक परिवारों के सदस्य उनके लिए अपने घरों को खोलेंगे। शिष्यों को स्वामित्व की चिन्ता नहीं होती क्योंकि उनके पास कोई चीज़ अपनी नहीं होती- वे केवल परमेश्वर की चीज़ों के भण्डारी होते हैं।

एक अन्तिम उदाहरण
A Final Example

मत्ती 24-25 में पाया जाने वाला यीशु का ''पहाड़ी उपदेश'' जिसके बारे में कुछ लोगों की गलत विचारधारा है कि वह उद्धार न पाए लोगों से बोल रहा था, अत: वह अनुयुक्त रूप से यह परिणाम निकालते हैं कि उसके द्वारा वहां कही गई कोई भी चीज़ उन पर लागू नहीं होती। वे अविश्वसनीय सेवक और दस कुंवारियों के दृष्टांत को ऐसे पढ़ते हैं मानो वे अविश्वासियों को संबोधित करके कहे गए हैं। लेकिन, जैसा मैंने पहले भी कहा, दोनों ही यीशु के घनिष्ठ शिष्यों को संबोधित किये गए थे (मत्ती 24:3; मर. 13:3)। इसलिए यदि पतरस, याकूब, यूहन्ना और अन्द्रियास को तैयार न रहने की संभावना हेतु चेतावनी दिये जाने की ज़रूरत थी, उसी तरह से हमें भी है। पहाड़ी उपदेश में यीशु द्वारा दी गई चेतावनियां प्रत्येक विश्वासी पर लागू होती हैं, उन पर भी जो इस बारे में विचार न भी करते हों क्योंकि वे उस पर ध्यान देने में असफल रहे जो यीशु द्वारा कहा गया था।

नियम # 3 ईमानदारी से पढ़ें। संदर्भ में अपनी थियोलोजी को न डालें। यदि आप ऐसा कुछ पढ़ते हैं जो आपके विश्वास से मेल नहीं खाता तो बाइबल को बदलने का प्रयास न करें; बल्कि अपनी मान्यता अथवा विश्वास को बदलने का प्रयास करें।

Rule #3 Read Honestly. Don't force your theology into a text. If you read something that contradicts what you believe, don't try to change the Bible; change what you believe.

हममें से हर कोई बाइबल को पहले से ली गई प्रवृत्ति के आधार पर बढ़ता है। इसी कारण हमारे लिए कई बार बाइबल को ईमानदारीपूर्वक पढ़ना कठिन हो जाता है। हम समापन अपनी मान्यताओं को बाइबल पर थोपते हुए करते हैं, बजाय इसके कि बाइबल हमारी थियोलोजी को बदले। हम कई बार बाइबल के उन परिच्छेदों की उपेक्षा करते हैं जो हमारा विरोध करते प्रतीत होते हैं।

यहां अपनी थियोलोजी को संदर्भ पर थोपने का एक उदाहरण दिया गया है। एक विशिष्ट शिक्षक सर्वप्रथम यीशु द्वारा मत्ती 11:28-29 में उद्धरित पद को पढ़ता है:

> हे सब परिश्रम करने वालो और बोझ से दबे हुए लोगो, मेरे पास आओ; मैं तुम्हें विश्राम दूंगा। मेरा जूआ अपने ऊपर उठा लो; और मुझ से सीखो; क्योंकि में नम्र और मन में दीन हूं; और तुम अपने मन में विश्राम पाओगे (मत्ती 11:28-29)।

तत्पश्चात् शिक्षक स्पष्ट करता है कि यीशु दो *भिन्न* तरह के विश्रामों को दे रहा था। पहला विश्राम 11:28 में उद्धार का विश्राम है, और दूसरा विश्राम 11:29 में शिष्यता का विश्राम है। पहले विश्राम को यीशु के आगमन द्वारा प्राप्त किया जाता है दूसरा विश्राम उसे अपना प्रभु मानते हुए समर्पण करने के द्वारा या उसके जूए को उठाने के द्वारा प्राप्त किया जाता है।

क्या यीशु का अभिप्राय यही था? नहीं, यीशु ने नहीं कहा कि वह दो विश्रामों को दे रहा था। यीशु एक विश्राम उन्हें दे रहा था जो थके हुए और बोझ से दबे हैं, और उस एकमात्र विश्राम को यीशु का जूआ उठाने के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है अर्थात् उसके प्रति समर्पित होते हुए।

उस शिक्षक ने इस तरह का स्पष्टीकरण क्यों किया? क्योंकि परिच्छेद का सही अर्थ उसकी इस मान्यता से मेल नहीं खाता था कि दो तरह के स्वर्ग बाधित मसीही होते हैं-विश्वासी और शिष्य। अत: उसने ईमानदारी के साथ इस परिच्छेद की व्याख्या नहीं की।

निस्संदेह, जैसा हमने इस पुस्तक में उस विशिष्ट थियोलोजी के संबन्ध में पहले देखा, उस शिक्षक की व्याख्या यीशु द्वारा सिखाए गए शेष संदर्भ में सही नहीं बैठती है। नये नियम में कहीं भी ऐसा नहीं सिखाया गया है कि दो तरह के स्वर्गबाधित मसीही होते हैं-विश्वासी और शिष्या सभी सच्चे विश्वासी शिष्य हैं। जो शिष्य नहीं वे विश्वासी भी नहीं हैं। शिष्यता उचित विश्वास का फल है।

आइये, शुद्ध हृदयों के साथ बाइबल को ईमानदारीपूर्वक पढ़ने का प्रयास करें। हमारे ऐसा करने पर परिणाम मसीह के प्रति और भी अधिक समर्पित व आज्ञाकरिता का होगा।